Shodhshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
© 2019 SHISRRJ | Volume 2 | Issue 6 | ISSN : 2581- 6306

जैनेन्द्र का जीवनवृत्त

इन्दुबाला यदुवंशी
शोध–छात्रा–हिन्दी,
श्री गांधी पी0जी0 कॉलेज मालटारी, आजमगढ़,
वीर बहादुर सिंह पूर्वांचल विश्वविद्यालय,
जौनपुर, उत्तर प्रदेश, भारत।

शोध आलेख सार – जैनेन्द्र को अनेक लोग सत्ता का हिमायती लेखक भी मानते हैं, उन पर समय–समय पर यह आक्षेप लगता रहा है कि पुस्कारों को पाने के लिए वे तिकड़म का प्रयोग करते हैं, फिर उसके प्रति उपेक्षा का भाव भी उजागर करते हैं, परन्तु यह सत्य नहीं है क्योंकि सत्ता और प्रतिष्ठा से सीधे और प्रत्यक्ष लाभ लेने की प्रवृत्ति जैनेन्द्र जी में नहीं थी। जितने भी पुरस्कार और सम्मान जैनेन्द्र जी को मिले वे उनके कृतित्व एवं सर्जना के कारण उन्हें मिले।

मुख्य शब्द– जैनेन्द्र कुमार, लेखक, जीवनवृत्त, उपन्यासकार, कहानीकार, साहित्य।

जैनेन्द्र कुमार प्रेमचन्द्रोत्तर युग के एक ऐसे श्रेष्ठ कथा–शिल्पी हैं, जिन्होंने कथा–साहित्य में एक नवीन युग की स्थापना की है। हिन्दी साहित्य–जगत् में न केवल आप उपन्यासकार एवं कहानीकार के रूप में विख्यात हैं बल्कि मनोविश्लेषणात्मक परम्परा के प्रवर्तक एवं प्रसिद्ध गाँधीवादी विचारक के रूप में भी जाने जाते हैं।

प्रख्यात कथाकार एवं शिल्पकार जैनेन्द्र जी का जन्म 2 जनवरी, 1905 को अलीगढ़ जिले के कौड़ियागंज गाँव में हुआ था। जैनेन्द्र संकटाचतुर्थी को पैदा हुए थे, इसीलिए पास–पड़ोस के लोगों ने इन्हें सकटुआ नाम की संज्ञा दी। इनके पिता प्यारेलाल ने जब यह बात सुनी तो चिढ़ गये और बोले कि यह तो आनंद का समय है, इसीलिए इसका नाम आनंदीलाल रखा जाएगा।[1] इनके मामा लाला भगवानदीन ने हस्तिनापुर में एक गुरुकुल की स्थापना की थी, उसी गुरूकुल में इनकी शिक्षा–दीक्षा हुई एवं नामकरण इस तरह हुआ। वहाँ गुरूकुल में विद्यार्थियों के नाम में आखिरी शब्द इन्द्र रखा जाता था, इसीलिए आनंदीलाल को भी जैनेन्द्र कर दिया गया। बाल्यावस्था में पिता की असमय मृत्यु हो जाने के उपरान्त इनका सकुशल पालन–पोषण माँ रमादेवी बाई एवं मामा भगवानदीन द्वारा ननिहाल अतरौली में हुआ। उनके मामा भगवानदीन रेलवे में कर्मचारी थे परन्तु अध्यात्म से प्रेरित

होकर साधु बन गए, इसीलिए शायद जैनेन्द्र जी में भी आस्था एवं संशय का प्रभाव दिखाई पड़ जाता है, जो उनके मामा के अन्दर दिखाई देता था। सन् 1912 में जैनेन्द्र जी ने गुरूकुल छोड़कर सेन्ट्रल हिन्दू कॉलेज, वाराणसी में 11वीं पास कर 12वीं कक्षा में प्रवेश लिए ही थे कि असहयोग आन्दोलन शुरू हो गया, फिर किसी तरह 12वीं पास कर काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में उच्च शिक्षा हेतु प्रवेश लिया। 1921 में विश्वविद्यालय की पढ़ाई छोड़कर गाँधी जी के असहयोग आन्दोलन में सक्रिय रूप से भाग लेने के उद्देश्य से दिल्ली आ गए।

तदनन्तर जैनेन्द्र जी लाला लाजपत राय के 'तिलक स्कूल ऑफ पालिटिक्स' में कुछ समय के लिए कार्य किए एवं कुछ समय बाद उसे भी छोड़ दिया। कुछ राजनीतिक पत्रिकाओं का सम्पादन करने के कारण इन्हें कारागार में डाल दिया गया, परन्तु वहाँ रहकर भी इन्होंने स्वाध्याय के साथ–साथ साहित्य–सृजन का कार्य भी निरन्तर जारी रखा। गाँधी जी से अत्यन्त प्रभावित होने के कारण आपको अहिंसावादी एवं गाँधीवादी दर्शन का प्रतीक माना जाता है। जैनेन्द्र अपने पथ के अनूठे अन्वेषक थे। उन्होंने प्रेमचन्द के सामाजिक यथार्थ के मार्ग को नहीं अपनाया, जो अपने समय का राजमार्ग था। वे प्रेमचन्द के विलोम नहीं थे, जैसा कि बहुत से समीक्षक सिद्ध करते रहे हैं, वे प्रेमचन्द के पूरक थे। प्रेमचन्द और जैनेन्द्र को साथ रखकर ही जीवन और इतिहास को उसकी समग्रता के साथ समझा जा सकता है। जैनेन्द्र का सबसे बड़ा योगदान हिन्दी गद्य के निर्माण में था क्योंकि भाषा के स्तर पर जैनेन्द्र द्वारा की गई तोड़–फोड़ ने हिन्दी को तराशने के लिए अभूतपूर्व काम किया। यदि जैनेन्द्र का गद्य न होता तो शायद अज्ञेय का गद्य संभव न होता। हिन्दी कहानी ने प्रयोगशीलता का पाठ जैनेन्द्र से ही सीखा और जैनेन्द्र जी ने ही हिन्दी को एक पारदर्शी भाषा और भंगिमा दी एवं एक नया तेवर प्रदान किया। आज के हिन्दी–गद्य पर जैनेन्द्र कुमार की अमिट छाप है। यही कारण है कि जैनेन्द्र के पात्र बाह्य वातावरण और परिस्थितियों से अप्रभावित लगते हैं और अपनी अंतर्मुखी गतियों से संचालित। इसी का एक परिणाम यह भी हुआ कि जैनेन्द्र के उपन्यासों में चरित्रों की भरमार नहीं दिखाई देती।

सामान्यतः व्यक्तित्व से अभिप्राय व्यक्ति की उन सभी विशेषताओं से लिया जाता है, जो उसे अन्य व्यक्तियों से पृथक करती हैं। व्यक्तित्व का शाब्दिक अर्थ भले ही सीमित हो लेकिन इस शब्द का गुणार्थक रूप अति विस्तृत है। व्यक्तित्व को किसी निश्चित परिभाषा में बाँधना कठिन है और फिर भी अनेक विद्वानों के व्यक्तित्व के विषय में अपने विचार व्यक्त किए हैं।

बीसवीं शताब्दी के हिन्दी–साहित्य के दैदीप्यमान सितारे जैनेन्द्र कुमार ने डॉ0 के0एम0मुंशी तथा प्रेमचन्द के साथ मिलकर एवं महात्मा गांधी की अध्यक्षता में ''भारतीय साहित्य परिषद की स्थापना की। प्रेमचन्द की मृत्यु के उपरान्त 'हंस' पत्रिका का सम्पादन भी किया। जैनेन्द्र जी अपने समय में महात्मा गाँधी, विनोबा भावे, रवीन्द्र नाथ टैगोर, पं0 जवाहरलाल नेहरू, जयप्रकाश नारायण और इन्दिरा गाँधी के साथ सतत् सम्बद्ध रहें।

जैनेन्द्र जी ने स्वयं अपने आर्थिक संघर्ष का उल्लेख करते हुए लिखा है कि– ''ऐसे मैं बाईस–तेईस का हो आया, हाथ पैर से जवान, वैसे नादान करने–धरने लायक कुछ भी नहीं। पढ़ा तो अधूरा, हुनर से अनजान, दुनिया तब तिलिस्म लगती, कि उसके दरवाजे मुझ पर बंद थे.....? उस रंगारंग सैरगाह की चहारदीवारी से बाहर होकर

पाता कि मैं अकेला हूँ.....?[2] असफलता व निराशा के इस बोझ से उनका जीवन अत्यन्त कष्टप्रद होता चला गया तथा आर्थिक विपन्नता व विपरीत परिस्थितियों व विषमताओं से वह टूट से गये। बेकार तथा बेरोजगार होकर वह आत्महत्या का विचार भी यदि मन में लाते तो वृद्धा माँ की याद उन्हें ऐसा न करने देती। अतः अपनी दुरावस्था को झेलने व ऐसी परिस्थिति में अपनी अस्मिता को परखने के लिए उन्होंने लेखन प्रारम्भ किया। प्रारम्भ में स्वर्गीय आचार्य चतुरसेन शास्त्री के 'गद्यकाव्य' अन्तस्थल से प्रभावित होकर जैनेन्द्र ने 'देश जाग उठा' गद्यकाव्य लिखा जिसे चतुरसेन शास्त्री जी ने 'विश्वमित्र' में छपने भेजा जो कदाचित् छपा नहीं। पहली बार 'कर्मवीर' पत्रिका में बेनाम प्रकाशित हुए इसी लेख को जैनेन्द्र जी अपना प्रथम लेखन प्रयास मानते हैं। जैनेन्द्र जी के एक मित्र की पत्नी को कहानी छापने का शौक था, फलतः उन्हीं की प्रेरणा से जैनेन्द्र जी ने कहानी लेखन आरम्भ किया। जिसके फलस्वरूप इन्होंने 'खेल' कहानी का लेखन किया, जो 'विशाल भारत' पत्रिका में छपी तथा इससे जैनेन्द्र जी को चार रूपये का मनीआर्डर प्राप्त हुआ जिससे इनको अपनी अकर्मण्यता की कीमत का पता चला कि ''पहला श्रेय मेरे साहित्य का यह हुआ कि उसने मेरी रक्षा की, मैं बचकर उसमें शरण ले सका, उसने मुझे जिलाया, अपने भीतर की आत्मग्लानि, हीन भावनाएँ और उसमें लिपटी हुई स्वप्नाकांक्षाएँ इन सबको कागज पर निकालकर जैसे मैंने स्वास्थ्य लाभ किया। जो मेरे अन्दर घुट रहा और मुझे घोट रहा था, उसी को बाहर निकालने की पद्धति से देखा कि मैं उससे मुक्ति पा रहा हूँ।''[3] व्यक्ति की आर्थिक विषमताएँ उसे कुछ ऐसी ऊर्जा प्रदान करती हैं जिसकी क्षमता अक्षुण्ण रहती है। इस दृष्टि से जैनेन्द्र की आर्थिक विषमता और निराशा ने उनके व्यक्तित्व की सार्थकता सिद्ध की, जहाँ आर्थिक विषमता ने लेखक को कभी आत्महत्या करने के लिए विवश किया, वहीं उनकी लेखनी ने उन्हें एक प्रतिष्ठित कथाकार बनाने में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया।

जैनेन्द्र जी का जीवन बचपन से ही संघर्षमय रहा। उनका विवाह 1929 में भगवती देवी के साथ हुआ और उसी वर्ष इनका उपन्यास 'परख' भी प्रकाशित हुआ। जैनेन्द्र जी ने अपनी माता जी के इच्छानुसार ही विवाह किया। उनकी पत्नी भगवती देवी कम पढ़ी–लिखी थीं परन्तु उन्होंने प्रत्येक विषम परिस्थिति में खुद को ढाला। वह एक कार्यकुशल, कष्ट सहने वाली व जीवन की प्रत्येक समस्याओं व जटिलताओं में सदैव जैनेन्द्र जी का साथ निभाने वाली साध्वी महिला थीं। जैनेन्द्र जी के परिवार में उनकी पाँच संतानें थीं, जिनमें दो पुत्र दिलीप कुमार व प्रदीप कुमार तथा तीन पुत्रियाँ कुमुद, कुसुम व कनक थीं। जैनेन्द्र जी का सम्पूर्ण जीवन कष्टप्रद रहा। 1935 में उनकी माता जी का देहान्त हुआ। तत्पश्चात् उनके पुत्र दिलीप कुमार की भी तरूणावस्था में ही मृत्यु हो गई, जिससे वे अत्यधिक क्षुब्ध हो गए। वे इस दुःख से किसी तरह उबर पाए थे कि जीवनसंगिनी भगवती देवी भी उनका साथ छोड़कर हमेशा के लिए गहरी नींद में सो गयीं। अतः जैनेन्द्र जी ने अपने जीवन में कई यातनाओं को सहा और विषम परिस्थितियों का डटकर सामना किया। उनके जीवन का यह दुःख अनुभव उनकी रचनाओं में भलीभाँति दिखाई देता है, जिससे उनके जीवन की कठिन परिस्थितियों से अवगत हुआ जा सके।

जैनेन्द्र कुमार शिष्ट और सदाचारी व्यक्ति थे। ये सभी श्रेणी में लोगों के साथ शिष्टतापूर्ण व्यवहार करते थे। इनके मन में छोटों के लिए स्नेह तथा बड़ों के लिए आदर का भाव रहता था। इनमें सहनशीलता इतनी अधिक थी कि किसी व्यर्थ और अनुचित बात का कठोरतापूर्वक विरोध नहीं करते थे। अतिथियों की सेवा और अपरिचित लोगों का सत्कार करना इनका जैसे धर्म बन गया था। अभिमान और बाह्य आडम्बर इनसे कोसों दूर थे। जैनेन्द्र कुमार

मिलनसार व्यक्ति थे और यदि बातों का सिलसिला एक बार चल पड़े तो ये इतने तल्लीन हो जाते थे कि वहाँ समय के ध्यान का अवकाश ही नहीं रहता था। वस्तुतः आत्म सम्मान की सीमा तक का अहंकार जैनेन्द्र कुमार में अवश्य था लेकिन इनका अहंकार अभिमान की सीमा से सर्वथा अछूता था। अपनी औपन्यासिक कृतियों में उन्होंने अहं भाव को उभारने की अपेक्षा गलाने पर अधिक जोर दिया है। अहंकार के भाव को गलाने के लिए जैनेन्द्र ने समर्पण भावना की पुष्टि की है। यहाँ विष्णु प्रभाकर का कथन द्रष्टव्य है।

''जैनेन्द्र कुमार अहंकारी आदमी बिल्कुल नहीं हैं, केवल दार्शनिकता के कारण जो अलगाव उनमें आ गया है, वहीं अहंकार–सा जान पड़ता था। पास जाकर देखें तो माथे पर उठी हुई रेखाओं के पीछे सरलता भरी पड़ी थी। इतनी अधिक कि वह सरलता का पर्याय प्रतीत होते हैं।''[4]

सांसारिक समृद्धि की चकाचौंध की दृष्टि से निराश जैनेन्द्र कुमार जी को जीवन का एक–एक पल भारी लगता था। इस बोझ को हल्का करने के लिए इनका मात्र अभय स्थान पुस्तकालय का एक कोना था। जैनेन्द्र कुमार बचपन से अन्तर्मुखी प्रवृत्ति के व्यक्ति थे, इसीलिए जीवन का अधिक समय इन्होंने पुस्तकालय के कोने में ही बिताया। अपने आप में डूबे रहना इनका स्वभाव बन गया था। विचारों में खोए रहना और अपनी मानसिक घुटन शब्दों के माध्यम से प्रकट करना इसके लिए आवश्यक बन गया था। इनका प्रारम्भिक लेखन–कार्य इनकी सांसारिकता से पलायन वृत्ति का ही परिणाम था। इस बात को जैनेन्द्र इन शब्दों में स्वीकार करते हैं– ''अपने भीतर की आत्मग्लानि, हीन भावना और उसमें सिमटी हुई स्वप्नाकांक्षाओं को कागज पर निकाल कर जैसे मैंने स्वास्थ्य लाभ प्राप्त किया।''[5]

जैनेन्द्र जी अत्यन्त कोमल स्वभाव वाले व सादगीपूर्ण जीवन व्यतीत करने वाले व्यक्ति थे। ये उन श्रेष्ठ रचनाकारों में हैं जिन्होंने अपनी मेधा का चहुमुखी प्रयोग किया है। ऐसे रचनाकार समाज को एक नई मंजिल तक पहुँचाने में मूल विचारों का आधार प्रदान करते हैं। मानव समाज के विकास में वैचारिक क्रान्ति सदा रचनाकारी एवं दार्शनिकों द्वारा प्रदान की गई है। इसीलिए आज का यह समाज आदिम युग से लेकर इक्कीसवीं सदी तक की नई ऊँचाईयों को लाँघ पाया है। जैनेन्द्र जी ने अपनी श्रेष्ठ रचनाओं में उपन्यास, कहानी–संग्रह, नाटक, संस्मरण, ललित निबन्ध, संस्कृति, धर्म दर्शन और राजनीति, पत्रकारिता एवं किशोर साहित्य सम्बन्धित रचनाएँ प्रदान ही नहीं की बल्कि उन्होंने उन मनीषियों के उपन्यास, कहानी–संग्रह एवं नाटकों का अनुवाद भी प्रस्तुत किया है। जिससे हिन्दी साहित्य का कलेवर धनी एवं विस्तृत हुआ है।

सहलेखन और सम्पादन कार्य के अतिरिक्त जैनेन्द्र जी एक सफल जागरूक पत्रकार के रूप में भी सामने आते हैं। साहित्यिक पत्रकारिता की परम्परा को पुष्ट करने में जैनेन्द्र जी का अप्रतिम योगदान रहा है। साहित्य की विविध विधाओं को जैनेन्द्र जी ने पत्र–पत्रिका के माध्यम से एक नया मोड़ प्रदान किया है। जिस प्रकार जैनेन्द्र जी के निबन्धों से यह तथ्य स्पष्ट होता है कि वे जीवन में आदर्श और यथार्थ के समन्वय को प्रमुखता देते हैं, उसी प्रकार पत्रकारिता के क्षेत्र में भी जैनेन्द्र जी ने आदर्श और यथार्थ का सफलतपूर्वक समन्वय किया है। इस संदर्भ में वे प्रेमचन्द के अनुयायी हैं। जिस प्रकार साहित्य सृजन के पीछे प्रेमचन्द का मूल भाव था ''हमारी कसौटी पर वह

साहित्य खरा उतरेगा जिसमें उच्च चिन्तन हो, स्वाधीनता का भाव हो, सौन्दर्य का सार हो, सृजन की आत्मा हो, जीवन की सच्चाईयों का प्रकाश हो, जो हममें गति, संघर्ष और बेचैनी पैदा करें, सुलाए नहीं क्योंकि अब ज्यादा सोना मृत्यु का लक्षण है।''[6] इसी मूल भाव को ग्रहण कर जैनेन्द्र जी ने प्रेमचन्द के बाद 'हंस' के सम्पादकीय कार्यों में शिवरानी देवी के साथ कार्य किया। जैनेन्द्र जी की विशिष्टता यह भी रही है कि उन्होंने सृजनात्मक क्षेत्र में कार्य करने के अतिरिक्त अनुवाद क्षेत्र में भी सक्रियता दिखाई हैं, इस प्रकार की विशिष्टता बहुत कम लोगों में दृष्टिगोचर होती है।

जैनेन्द्र को अनेक लोग सत्ता का हिमायती लेखक भी मानते हैं, उन पर समय–समय पर यह आक्षेप लगता रहा है कि पुस्कारों को पाने के लिए वे तिकड़म का प्रयोग करते हैं, फिर उसके प्रति उपेक्षा का भाव भी उजागर करते हैं, परन्तु यह सत्य नहीं है क्योंकि सत्ता और प्रतिष्ठा से सीधे और प्रत्यक्ष लाभ लेने की प्रवृत्ति जैनेन्द्र जी में नहीं थी। जितने भी पुरस्कार और सम्मान जैनेन्द्र जी को मिले वे उनके कृतित्व एवं सर्जना के कारण उन्हें मिले। लगभग 57 वर्ष तक जैनेन्द्र जी ने हिन्दी साहित्य की निरन्तर सेवा की, पत्नी की मृत्यु ने उन्हें गहरा मानसिक दुःख एवं आघात पहुँचाया। अथाह पीड़ा को सहते हुए जैनेन्द्र कुमार अन्त में 24 दिसम्बर, 1988 को इस जीवन से हमेशा के लिए विदा हो गए। जैनेन्द्र जी की मृत्यु से एक युग का अन्त हो गया, वे अपने ढंग के अनोखे साहित्यकार थे। जैनेन्द्र कुमार के चिन्तन के पारखी विष्णु प्रभाकर के अनुसार–

''उन्होंने जो कुछ सुझाया, अपने निजी चिन्तन के आधार पर सुझाया। विवादास्पद होने के बावजूद आज न सही, कल उनकी गणना इस सदी के मौलिक विचारकों के रूप में की जाएगी।''[7]

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :

1. जैनेन्द्र कुमार, लेखक, गोविन्द मिश्र, पृ0सं0 08–09। साहित्य अकादमी, नई दिल्ली संस्करण–2014
2. साहित्य का श्रेय और प्रेम (मैं और मेरी कृति), लेखक– जैनेन्द्र कुमार, पृ0सं0 31, पूर्वोदय प्रकाशन नई दिल्ली।
3. साहित्य का श्रेय और प्रेय, जैनेन्द्र कुमार, पूर्वोदय प्रकाशन नई दिल्ली। पृ0सं0 18–19
4. जैनेन्द्र मेरी दृष्टि में (लेख), विष्णु प्रभाकर
5. कहानीकार जैनेन्द्र, लेखक, मधुरेश, पृ0सं0 14
6. हंस, प्रथम अंक (पत्रकारिता का इतिहास), मार्च–1930, पृ0सं0 54
7. जैनेन्द्र, साक्षी हैं पीढ़ियाँ, लेखक–विष्णु प्रभाकर, पृ0सं0–13, पूर्वोदय प्रकाशन नई दिल्ली।